

राधा किशन साव

बनाम

गोपाल मोदी और अन्य

14 फरवरी, 1977

[पी.के. गोस्वामी और पी.एन. शिंगल, न्यायमूर्तिगण]

बिहार भवन (पट्टा, किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 1947, धाराएँ 11 और 11-क — क्षेत्र-सीमा — किराया नियंत्रक द्वारा निर्धारित परिसर का किराया — फर्नीचर किराए पर देने के लिए किया गया पश्चातवर्ती अनुबंध — फर्नीचर के किराए का भुगतान न करना — क्या यह बेदखली का आधार है।

बिहार भवन (पट्टा, किराया तथा बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 1947 की धारा 11 में यह उपबंध है कि किसी किरायेदार को उसमें विनिर्दिष्ट एक या अधिक आधारों पर न्यायालय द्वारा पारित डिक्री के निष्पादन के अतिरिक्त बेदखली के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जाएगा। धारा 11-क के अधीन, यदि किसी भवन के कब्जे की पुनर्प्राप्ति के लिए वाद में किरायेदार वाद का प्रतिवाद करता है, तो न्यायालय किराये तथा, यदि कोई हो, बकाया किराये के जमा करने का आदेश पारित कर सकता है, और यदि आदेश की तारीख से 15 दिनों के भीतर बकाया राशि जमा करने में विफलता होती है, तो न्यायालय बेदखली के विरुद्ध प्रतिरक्षा को निरस्त किए जाने का आदेश देगा।

वादी (उत्तरदाता) ने अपने परिसर के दो कमरे अधिनियम की धारा 5 के अधीन किराया नियंत्रक द्वारा निर्धारित किराये पर प्रतिवादी (अपीलकर्ता) को किराये पर दिए। कुछ समय पश्चात, वादी ने कुछ फर्नीचर प्रतिवादी को पारस्परिक रूप से सहमत किराये पर किराये पर दिया। तीन माह तक किराये का भुगतान न किए जाने के आधार पर प्रतिवादी की बेदखली के लिए वादी द्वारा दायर वाद को विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज कर दिया कि परिसर के किराये के साथ फर्नीचर का किराया अदा न करना

अधिनियम की धारा 11(1)(घ) के अधीन चूक नहीं है। अपील पर, अधीनस्थ न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि परिसर के किराये के साथ फर्नीचर का किराया अदा न करना धारा 11(1)(घ) के अर्थ के भीतर चूक है। उच्च न्यायालय ने अधीनस्थ न्यायाधीश के निर्णय को बरकरार रखा। धारा 11-क के अधीन किराया जमा करने के प्रश्न पर, अधीनस्थ न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि प्रतिवादी ने नियमित रूप से पश्चातवर्ती जमा को दर्शाने हेतु अभिलेख दाखिल किए थे। दूसरी ओर, उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि प्रतिवादी यह दर्शाने के लिए कोई सामग्री प्रस्तुत करने में विफल रहा कि "चालान पारित होने के पश्चात स्वयं धनराशि जमा करने से उसे किस बात ने रोका तथा धनराशि नाज़िर को सौंपे जाने का क्या कारण था।" इसी आधार पर, उसने वादी का वाद स्वीकार कर लिया।

अपील स्वीकार करते हुए,

अभिनिर्धारित: उच्च न्यायालय तथा अधीनस्थ न्यायाधीश ने प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा अभिलब्ध तथ्यों पर विधिक स्थिति का गलत मूल्यांकन करते हुए धारा 11(1)(घ) के अधीन चूक के आधार को स्वीकार करके विधि की त्रुटि की। अतः अधिनियम की धारा 11(1)(घ) के अधीन बेदखली की डिक्री प्रदान करने का कोई आधार नहीं था।

[990 सी]

1. (क) बेदखली के लिए अधिनियम की धारा 11(1)(घ) के अधीन आधार वही होगा जो किराया नियंत्रक द्वारा निर्धारित किराये के भुगतान में चूक से उत्पन्न हो। अधिनियम की धारा 4 में यह उपबंध है कि किसी भी विपरीत संविदा अथवा विधि में निहित किसी बात के होते हुए भी, किसी मकान-मालिक के लिए, किसी भवन के संबंध में उस समय देय किराये में वृद्धि करना, अथवा उसकी किसी वृद्धि का दावा करना, अधिनियम के उपबंधों के अनुसार किए जाने के अतिरिक्त, विधिसम्मत नहीं होगा। [989 ई-एफ]

वर्तमान मामले में, किराया नियंत्रक द्वारा परिसर का किराया निर्धारित कर दिए जाने के पश्चात, वादी किराया नियंत्रक के आदेश के बिना उस किराये में परिवर्तन नहीं कर सकता

था। प्रतिवादी द्वारा परिसर के पट्टे के पश्चात सहमत किए गए फर्नीचर के किराये के भुगतान में चूक को धारा 11(1)(घ) के दायरे में नहीं लाया जा सकता था जिससे मकान-मालिक बेदखली की डिक्री प्राप्त करने का अधिकारी हो जाए। मूल पट्टे के अधीन भवन के किराये से फर्नीचर का किराया पृथक ही बना रहता है। [989 डी एंड पी]

(ख) किराया नियंत्रक द्वारा निर्धारित युक्तियुक्त किराये में किसी भी परिवर्तन के लिए धारा 7 के अधीन किराया नियंत्रक की स्वीकृति प्राप्त करना आवश्यक होगा। यदि पक्षकार किराया नियंत्रक के समक्ष उपस्थित होकर सहमति से अधिनियम के अधीन ग्राह्य संशोधित किराया निर्धारित करने का आदेश किराया नियंत्रक से प्राप्त करें, तो उसमें कोई विधिक बाधा नहीं है। अधिनियम के उपबंधों के अनुसार किए जाने के अतिरिक्त, युक्तियुक्त किराये में किसी भी वृद्धि की विधि द्वारा अनुमति नहीं है। अधिनियम के अधीन निर्धारित प्रक्रिया का आश्रय लिए बिना, निर्धारित युक्तियुक्त किराये से अधिक किसी भी किराये के भुगतान में चूक, अधिनियम की धारा 11(1)(घ) के अधीन बेदखली का आधार उत्पन्न नहीं करेगी। [990 ए-बी]

धारा 11-क के अंतर्गत पारित आदेश का अनुपालन न करने पर प्रतिरक्षा को समाप्त करने का दंड, धारा 11 के अंतर्गत अनुमत बेदखली के आधारों से भिन्न और पृथक है। [988 एच]

2. प्रतिवादी का यह तर्क कि धारा 11-क के अंतर्गत आदेश केवल विचारण न्यायालय द्वारा ही पारित किया जा सकता है, निराधार है, क्योंकि अपील वाद की ही निरंतरता होती है। वाद लंबित रहते हुए बकाया किराए की वसूली के उद्देश्य से धारा 11-क के अंतर्गत मकान-मालिक को दिया गया लाभ, वाद के किसी भी चरण में—चाहे वह विचारण न्यायालय में हो या अपील में—उसे प्राप्त किया जा सकता है। [988 जी]

3. जहाँ प्रथम अपीलीय न्यायालय ने प्रतिवादी के पक्ष में किसी तथ्य के संबंध में स्पष्ट और सकारात्मक निष्कर्ष निकाला था, वहाँ उच्च न्यायालय का उस महत्वपूर्ण तथ्य पर

पहली बार विपरीत निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए भिन्न मार्ग अपनाना अनुचित था। स्थिति भिन्न होती यदि उच्च न्यायालय ने दीवानी प्रक्रिया संहिता के आदेश 41, नियम 28 के अंतर्गत अतिरिक्त साक्ष्य मँगाए होते। किंतु उच्च न्यायालय द्वारा अपनाई गई इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप प्रतिवादी को गंभीर क्षति पहुँची। [987 ई-एफ]

वर्तमान मामले में, स्वयं उच्च न्यायालय ने यह स्वीकार किया था कि किराये की राशि नाज़िर को सौंप दी गई थी, किन्तु आपति यह थी कि प्रतिवादी को राशि नाज़िर को सौंपने के स्थान पर स्वयं उसे जमा करना चाहिए था। नाज़िर द्वारा राशि जमा करने में हुई विलम्ब के विषय में समुचित जाँच के अभाव में, उच्च न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील में प्रतिवादी की बेदखली के विरुद्ध प्रतिरक्षा को निरस्त करके उसे दंडित करना उचित नहीं था। [988 बी]

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार: 1976 का दीवानी अपील सं. 721

(पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 27 अप्रैल 1976 के निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध, अपीलीय डिक्री संख्या 6 वर्ष 1974 में, विशेष अनुमति से दायर अपील।)

हरबंस सिंह मारवाह, अपीलकर्ता की ओर से।

के. के. सिन्हा, एस. के. सिन्हा तथा देवी प्रसाद, उत्तरदाताओं की ओर से।

न्यायालय का निर्णय निम्नलिखित द्वारा प्रदान किया गया :

गोस्वामी, न्यायमूर्ति- यह विशेष अनुमति से दायर अपील, किरायेदार की बेदखली से संबंधित वाद से उत्पन्न द्वितीय अपील में पटना उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध निर्देशित है।

आयुक्त परिसर, राँची स्थित मोदी भवन की दुकान सं. 17 तथा 18 के रूप में वर्णित दो कमरे, वादी (यहाँ प्रत्यर्थी) द्वारा प्रतिवादी (यहाँ अपीलकर्ता) को मासिक किराये पर दिए गए थे। हम उन्हें वादी तथा प्रतिवादी के रूप में वर्णित करेंगे। यह निर्विवाद है कि दोनों दुकानों का युक्तियुक्त किराया रु. 50/- प्रतिमाह (जलकर सहित) बिहार भवन (पट्टा, किराया

तथा बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 1947 (संक्षेप में अधिनियम) की धारा 5 के अधीन किराया नियंत्रक के 30 मई, 1953 के आदेश द्वारा निर्धारित किया गया था। तत्पश्चात, पाँच अलमारियाँ तथा छह रैक जैसे कुछ फर्नीचर भी वादी द्वारा प्रतिवादी को रु. 28 प्रतिमाह के किराये पर दिए गए। वादी द्वारा 18 अप्रैल, 1966 को एक वाद संस्थित किया गया, जिसमें जुलाई से सितम्बर 1965 तक तीन माह के लिए उक्त दोनों दुकानों तथा फर्नीचर के किराये का भुगतान न किए जाने के आधार पर प्रतिवादी की बेदखली की प्रार्थना की गई।

मुंसिफ, राँची ने यह अभिनिर्धारित करते हुए वाद खारिज कर दिया कि दोनों दुकानों के किराये के साथ फर्नीचर का किराया अदा न करना, अधिनियम की धारा 11(1)(घ) के अधीन चूक नहीं है। मुंसिफ ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 106 के अधीन सूचना की कोई विधिमान्य तामील नहीं हुई थी।

अपील पर, द्वितीय अपर अधीनस्थ न्यायाधीश, राँची ने विचारण न्यायालय के निर्णय को उलट दिया तथा चूक के आधार को स्वीकार करते हुए बेदखली के लिए वाद की डिक्री पारित कर दी। अधीनस्थ न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया कि वादी रु. 78/- प्रतिमाह की दर से किराया प्राप्त करने का अधिकारी था, जिसमें फर्नीचर का किराया भी सम्मिलित था, और इसलिए प्रतिवादी द्वारा रु. 50/- प्रतिमाह की राशि प्रेषित किया जाना उसके किराया-दायित्व का विधिमान्य निर्वहन नहीं था तथा वह अधिनियम की धारा 11(1)(घ) के अर्थ में चूककर्ता था। अधीनस्थ न्यायाधीश ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि बेदखली की सूचना की समुचित तामील नहीं हुई थी। इस अपील में हम सूचना की तामील के प्रश्न से संबंधित नहीं हैं।

चूँकि अधीनस्थ न्यायाधीश तथ्यों का अंतिम न्यायालय था, अतः हमारे प्रयोजन के लिए निम्नलिखित निष्कर्षों का उल्लेख करना उपयुक्त होगा :

- (1) “अतः मैं यह निर्णय करता हूँ कि वादी प्रति माह 50 रुपये किराया वसूल करने का अधिकारी था।
- (2) पक्षकारों के साक्ष्य तथा प्रदर्श 2 के आलोक में मैं यह मानता हूँ कि वादी ने वादपत्र की अनुसूची ‘ख’ में वर्णित फर्नीचर उपलब्ध कराया था और उसके लिए प्रति माह 28 रुपये किराया निर्धारित किया गया था।

(3) फर्नीचर की बाद की आपूर्ति, जिसका मूल्य पर्याप्त था, को मूल किरायेदारी से असंबद्ध एक पूर्णतः स्वतंत्र अनुबंध के रूप में माना जाना चाहिए

प्रतिवादी द्वारा उच्च न्यायालय में दायर द्वितीय अपील असफल रही। उच्च न्यायालय ने प्रथम अपीलीय न्यायालय से सहमति व्यक्त की कि फर्नीचर का किराया भी धारा 11(1)(घ) के अधीन विधिपूर्वक देय था और इसलिए जुलाई से सितम्बर 1965 तक रु. 78/- प्रतिमाह के भुगतान में चूक का आधार वादी के लिए उपलब्ध था।

उच्च न्यायालय ने बेदखली की डिक्री को बनाए रखने के लिए एक अतिरिक्त कारण भी दिया। अपील की कार्यवाही के दौरान, अधीनस्थ न्यायाधीश द्वारा अधिनियम की धारा 11-क के अधीन एक आदेश पारित किया गया था, जिसके द्वारा प्रतिवादी को उस धारा के अनुसार रु. 50/- प्रतिमाह की दर से परिसर का किराया जमा करने का निर्देश दिया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि अधीनस्थ न्यायाधीश के समक्ष इस बात को लेकर कुछ विवाद था कि धारा 11-क के अधीन पारित इस आदेश का प्रतिवादी द्वारा अनुपालन किया गया था अथवा नहीं। तथापि, अधीनस्थ न्यायाधीश ने धारा 11-क के अधीन न्यायालय के आदेश का अनुपालन न किए जाने के आधार पर प्रतिवादी की प्रतिरक्षा निरस्त करने के लिए वादी की दलील को निम्नलिखित शब्दों में अस्वीकार कर दिया :

“अपीलकर्ता (वादी) की ओर से यह तर्क दिया गया कि न्यायालय के निर्देश के बावजूद प्रतिवादी ने बाद का किराया जमा नहीं किया, इसलिए इस न्यायालय को बेदखली के विरुद्ध उसकी प्रतिरक्षा समाप्त कर देनी चाहिए थी। प्रतिवादी ने ऐसे दस्तावेज़ प्रस्तुत किए हैं जिनसे यह सिद्ध होता है कि बाद में किराया नियमित रूप से जमा किया गया था। अतः वादी की यह आपत्ति असफल होती है।”

दूसरा प्रयास, और इस बार सफलतापूर्वक, वादी द्वारा उच्च न्यायालय में किया गया, जिसमें

अधिनियम की धारा 11-क के अधीन आधार का अवलंब लेकर प्रतिवादी की बेदखली के विरुद्ध प्रतिरक्षा को निरस्त किए जाने का आग्रह किया गया।

उच्च न्यायालय के निर्णय से यह स्पष्ट है कि अधिनियम की धारा 11-क के अनुपालन न किए जाने के संबंध में, बिना किसी अतिरिक्त जाँच के, प्रथम अपीलीय न्यायालय के निष्कर्ष के विपरीत निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए कोई सामग्री उपलब्ध नहीं थी। अतः, उच्च न्यायालय ने पक्षकारों को कुछ दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति दी और उन्हीं पर अवलंबन करते हुए निम्नलिखित प्रकार से अभिनिर्धारित किया :-

“अपीलकर्ता (प्रतिवादी) की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क दिया कि बैंक में धनराशि जमा करने में हुई देरी न्यायालय के अधिकारियों की चूक के कारण हुई थी, इसलिए अपीलकर्ता (प्रतिवादी) पर कोई दंड नहीं लगाया जाना चाहिए। तथापि, विद्वान अधिवक्ता यह दर्शाने के लिए कोई सामग्री प्रस्तुत करने में असफल रहे कि चालान पारित होने के बाद 15-3-1974 को अपीलकर्ता (प्रतिवादी) को स्वयं धनराशि जमा करने से किस कारण रोका गया और धनराशि नाज़िर को सौंपे जाने का क्या कारण था।”

ऐसे मामले में, जिसमें प्रथम अपीलीय न्यायालय ने धारा 11-क के अधीन अपने आदेश के अनुपालन न किए जाने के संबंध में प्रतिवादी के पक्ष में स्पष्ट निष्कर्ष दिया था, हम यह नहीं मानते कि उच्च न्यायालय द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया, जिसके माध्यम से उसने बिना नाज़िर की मौखिक साक्ष्य के, किराये की राशि नाज़िर को सौंपे जाने जैसे एक महत्वपूर्ण तथा निर्णायक तथ्य के संबंध में, प्रथम बार, प्रथम अपीलीय न्यायालय के निष्कर्ष के विपरीत निष्कर्ष पर पहुँचने का प्रयास किया, उचित था। नाज़िर द्वारा प्रस्तुत लिखित सूचना में भी इस बात का कोई खंडन नहीं है कि 14 मार्च, 1974 को किराये की राशि उसे सौंप दी गई थी। यदि उच्च न्यायालय ने न्यायहित में, सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 41, नियम 28 के अधीन अतिरिक्त साक्ष्य ग्रहण करने के लिए निर्देश दिया होता, तो स्थिति भिन्न

होती, जिससे पक्षकारों को अपनी-अपनी कथनावली सिद्ध करने का समुचित तथा पर्याप्त अवसर प्राप्त होता, जिसमें किसी विशेष परिस्थिति में जमा स्वीकार करने के संबंध में संबंधित न्यायालय की प्रक्रिया भी सम्मिलित होती। यह सत्य है कि उच्च न्यायालय स्वयं भी आदेश 41, नियम 27 के अधीन अपने समक्ष दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति दे सकता था, किन्तु, जैसा कि हमने देखा है, इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप प्रतिवादी को अत्यधिक प्रतिकूलता हुई। यहाँ तक कि उच्च न्यायालय के समक्ष अतिरिक्त साक्ष्य ग्रहण किए जाने के पश्चात भी अधीनस्थ न्यायाधीश के न्यायालय में धारा 11-क के अधीन आदेश के अनुपालन में धनराशि जमा करने की प्रक्रिया के संबंध में अधिवक्तागण भी हमें कोई जानकारी देने में सक्षम नहीं थे।

इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए कि प्रथम अपीलीय न्यायालय ने धारा 11-क के अधीन निर्धारित वैधानिक अवधि के भीतर धनराशि का जमा किया जाना विधि के अनुसार पर्याप्त माना था, उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत सामग्री के आधार पर उसके विपरीत निष्कर्ष को स्वीकार करने में हमें अत्यन्त संकोच है। यह विशेष रूप से इसलिए भी है क्योंकि ऊपर उद्धृत निर्णयांश से स्वयं उच्च न्यायालय ने भी यह स्वीकार किया है कि 14 मार्च, 1974 को धनराशि नाज़िर को सौंप दी गई थी। उच्च न्यायालय की एकमात्र आपत्ति यह थी कि प्रतिवादी को 15 मार्च, 1974 को धनराशि नाज़िर को सौंपने के स्थान पर स्वयं उसे जमा करना चाहिए था। चूँकि धनराशि नाज़िर द्वारा 28 मई, 1974 को जमा की गई थी, अतः नाज़िर के हाथों जमा करने में हुई विलम्ब तथा उसके कारणों के संबंध में समुचित जाँच के अभाव में, उच्च न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील में प्रतिवादी की बेदखली के विरुद्ध प्रतिरक्षा को निरस्त करके उसे दंडित करना उचित नहीं था। अतः वादी के बेदखली वाद की डिक्री पारित करने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा जिस दूसरे आधार पर भरोसा किया गया था, वह भी असफल हो जाता है।

इसके अतिरिक्त, धारा 11 उन परिस्थितियों का वर्णन करती है जिनमें किरायेदारों की

बेदखली की जा सकती है। उस धारा के अधीन, कोई भी किरायेदार उसमें विनिर्दिष्ट एक अथवा अधिक आधारों पर न्यायालय द्वारा पारित डिक्री के निष्पादन के अतिरिक्त बेदखली के लिए उत्तरदायी नहीं होगा। धारा 11-क, जिसे बिहार अधिनियम 16, 1955 द्वारा संशोधन के माध्यम से जोड़ा गया था, निम्नलिखित प्रकार से है :-

“किरायेदारों द्वारा बेदखली के वादों में किराया जमा—यदि किसी भवन के कब्जे की पुनर्प्राप्ति के लिए दायर वाद में किरायेदार बेदखली के दावे का प्रतिवाद करता है, तो मकान-मालिक वाद के किसी भी चरण में किरायेदार को उस दर से, जिस दर पर अंतिम बार किराया दिया गया था, माह-दर-माह किराया जमा करने तथा यदि कोई बकाया किराया हो तो उसे भी जमा करने के आदेश हेतु आवेदन कर सकता है; और न्यायालय, पक्षकारों को सुने जाने का अवसर देने के बाद, माह-दर-माह ऐसे दर पर किराया तथा यदि कोई बकाया किराया हो तो उसके जमा का आदेश दे सकता है, और यदि किरायेदार आदेश की तिथि से पंद्रह दिनों के भीतर बकाया किराया जमा करने में विफल रहता है या किसी भी माह का किराया अगले आगामी माह की पंद्रहवीं तिथि तक उक्त दर से जमा नहीं करता है, तो न्यायालय बेदखली के विरुद्ध प्रतिरक्षा को समाप्त करने का आदेश देगा और किरायेदार को उसी स्थिति में रखेगा मानो उसने बेदखली के दावे का प्रतिवाद ही न किया हो; मकान-मालिक यह भी आवेदन कर सकता है कि जमा किए गए किराए को, बेदखली की डिक्री प्राप्त करने के अपने अधिकार को प्रभावित किए बिना, निकालने की अनुमति दी जाए और न्यायालय उसे ऐसा करने की अनुमति दे सकता है; न्यायालय आगे यह भी आदेश दे सकता है कि वाद की लागत तथा ऐसी अन्य क्षतिपूर्ति, जो वह निर्धारित करे, किरायेदार से वसूल की जाए।”

प्रतिवादी की ओर से यह प्रस्तुत किया गया कि धारा 11-क के अंतर्गत आदेश केवल विचारण न्यायालय द्वारा ही पारित किया जा सकता है। किंतु हम इस मत को स्वीकार करने

में असमर्थ हैं, क्योंकि अपील वाद की ही निरंतरता होती है। धारा 11-क के अंतर्गत मकान-मालिक को *वाद लंबित रहने के दौरान* बकाया किराए की वसूली के उद्देश्य से जो लाभ प्रदान किया गया है, जो कि किरायेदारी की शर्तों के विधिसम्मत प्रवर्तन की प्रकृति का है, वह मकान-मालिक को वाद के किसी भी चरण में, चाहे वह विचारण न्यायालय में हो या अपील में, प्राप्त किया जा सकता है। धारा 11-क के अंतर्गत पारित आदेश का अनुपालन न करने पर प्रतिरक्षा को समाप्त करने का दंड, अधिनियम की धारा 11 के अंतर्गत अनुमत बेदखली के आधारों से पृथक और भिन्न रखा जाना चाहिए।

अब विचार के लिए केवल यही एक आधार शेष रह जाता है कि क्या प्रतिवादी ने जुलाई से सितंबर 1965 की अवधि के लिए किराए के भुगतान में चूक की थी। यदि यह केवल प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा किया गया तथ्यात्मक निष्कर्ष होता, तो उच्च न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील को खारिज करने में कोई त्रुटि नहीं होती। किंतु प्रथम अपीलीय न्यायालय के तथ्यात्मक निष्कर्षों के आधार पर भी यह प्रश्न विधिक जटिलता का रूप धारण कर लेता है।

प्रथम अपीलीय न्यायालय ने यह अभिलब्ध किया कि परिसर का किराया रु. 50/- प्रतिमाह था तथा उस किराये के भुगतान में किसी भी समय कोई चूक नहीं हुई थी। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने यह भी अभिलब्ध किया कि फर्नीचर का रु. 28/- प्रतिमाह का किराया "पश्चातवर्ती आपूर्ति" का विषय था तथा "मूल किरायेदारी से असंबद्ध एक पूर्णतः स्वतंत्र संविदा" था। तथापि, उसने यह अभिलब्ध किया कि चूँकि संबंधित महीनों के दौरान प्रतिवादी द्वारा परिसर के रु. 50/- प्रतिमाह के किराये के साथ उक्त राशि का भुगतान नहीं किया गया था, इसलिए प्रतिवादी अधिनियम की धारा 11(1)(घ) के अर्थ में चूककर्ता था। उच्च न्यायालय ने अधीनस्थ न्यायाधीश के इस विधिक निष्कर्ष को स्वीकार कर लिया है।

किन्तु, उपर्युक्त अभिलब्ध तथ्यों के आधार पर, इस मामले में प्रतिवादी द्वारा चूक किए जाने संबंधी उपर्युक्त विधिक दृष्टिकोण को हम स्वीकार करने में असमर्थ हैं। अधिनियम

की धारा 5 के अधीन वर्ष 1953 में किराया नियंत्रक द्वारा परिसर का किराया निर्धारित किए जाने के पश्चात, परिसर का किराया सदैव रु. 50/- प्रतिमाह ही रहा। पक्षकार पहले ही परिसर के युक्तियुक्त किराये के निर्धारण के लिए किराया नियंत्रक के समक्ष उपस्थित हो चुके थे, अतः वादी किराया नियंत्रक के आदेश के बिना उस निर्धारित किराये में परिवर्तन नहीं कर सकता था। अधिनियम की धारा 4 में यह उपबंध है कि "किसी भी विपरीत संविदा अथवा विधि में निहित किसी बात के होते हुए भी, किसी मकान-मालिक के लिए, किसी भवन के संबंध में उस समय देय किराये में वृद्धि करना अथवा उसकी किसी वृद्धि का दावा करना, इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार किए जाने के अतिरिक्त, विधिसम्मत नहीं होगा।" दोनों दुकानें, जो अधिनियम की धारा 2(कक) के प्रयोजनार्थ भवन हैं, बिना फर्नीचर वाले भवन के रूप में किराये पर दी गई थीं। रु. 50/- की यह किराया राशि अधिनियम की धारा 5 के अधीन किराया नियंत्रक द्वारा युक्तियुक्त किराये के रूप में निर्धारित की गई थी। अधिनियम की धारा 11(1)(घ) के अधीन बेदखली का आधार किराया नियंत्रक द्वारा निर्धारित इसी किराये के भुगतान में चूक होने से उत्पन्न होगा। प्रतिवादी द्वारा पट्टे के पश्चात सहमत किए गए फर्नीचर के किराये के भुगतान में चूक को धारा 11(1)(घ) के दायरे में नहीं लाया जा सकता जिससे मकान-मालिक बेदखली की डिक्री प्राप्त करने का अधिकारी हो जाए। प्रथम अपीलीय न्यायालय के अभिलब्ध निष्कर्षों के अनुसार, मूल पट्टे के अधीन भवन के किराये से फर्नीचर का किराया पृथक बना रहता है। यहाँ तक कि यदि फर्नीचर वापस भी कर दिया जाए, तब भी इस मामले में भवन का पट्टा प्रभावित नहीं होगा।

वादी तर्क देते हैं कि चूँकि "भवन" की परिभाषा में फर्नीचर भी सम्मिलित है, इसलिए किराया समेकित हो जाता है और प्रतिवादी रु. 78/- की कुल राशि का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी था तथा समेकित किराये के भुगतान में दो माह की किसी भी चूक से अधिनियम की धारा 11(1)(घ) लागू हो जाएगी। वादी आगे तर्क देते हैं कि चूँकि फर्नीचर का किराया पक्षकारों के मध्य सहमत किराया था, इसलिए अधिनियम की धारा 7 के अधीन

किराये के पुनर्निर्धारण के लिए किराया नियंत्रक के समक्ष जाने का न तो कोई अवसर था और न ही कोई विधिक आवश्यकता थी।

हम उपर्युक्त तर्क को स्वीकार करने में असमर्थ हैं। किराया नियंत्रक द्वारा निर्धारित युक्तियुक्त किराये में किसी भी प्रकार का परिवर्तन, चाहे वह भवन में सुधार के कारण हो अथवा भवन में फर्नीचर जोड़े जाने के कारण, किराया नियंत्रक की स्वीकृति प्राप्त करने के अधीन होगा। धारा 7, *अन्य बातों के साथ*, यह उपबंध करती है कि यदि किसी भवन का युक्तियुक्त किराया निर्धारित किए जाने के पश्चात किसी भी समय किराया नियंत्रक को यह प्रतीत हो कि उस निर्धारण के पश्चात मकान-मालिक के व्यय पर भवन में कोई वृद्धि अथवा सुधार किया गया है, तो नियंत्रक भवन का युक्तियुक्त किराया पुनर्निर्धारित कर सकता है। यदि मकान-मालिक तथा किरायेदार, दोनों पक्षकार, नियंत्रक के समक्ष उपस्थित होकर सहमति से अधिनियम के अधीन ग्राह्य संशोधित किराया निर्धारित करने का आदेश नियंत्रक से प्राप्त करें, तो उसमें कोई विधिक बाधा नहीं है। इसके अतिरिक्त कोई भी अन्य मार्ग अपनाया जाना, किरायेदारों के हितों के प्रतिकूल दुरुपयोग तथा अनुचित उपायों को जन्म देने के लिए बाध्य होगा। किराया नियंत्रक द्वारा निर्धारित युक्तियुक्त किराये में, अधिनियम के उपबंधों के अनुसार किए जाने के अतिरिक्त, किसी भी वृद्धि की विधि द्वारा अनुमति नहीं है। अधिनियम के अधीन निर्धारित प्रक्रिया का आश्रय लिए बिना, निर्धारित युक्तियुक्त किराये से अधिक किसी भी किराये के भुगतान में चूक, अधिनियम की धारा 11(1)(घ) के अधीन बेदखली का आधार उत्पन्न नहीं करेगी। अतः उच्च न्यायालय तथा उससे पूर्व अपर अधीनस्थ न्यायाधीश ने, प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा अभिलब्ध तथ्यों पर विधिक स्थिति का गलत मूल्यांकन करते हुए, धारा 11(1)(घ) के अधीन चूक के आधार को स्वीकार करके विधि की त्रुटि की। इसलिए, अधिनियम की धारा 11(1)(घ) के अधीन बेदखली की डिक्री प्रदान करने का कोई आधार नहीं था।

परिणामस्वरूप, उच्च न्यायालय का निर्णय अपास्त किया जाता है तथा वाद को

खारिज करने संबंधी मुंसिफ का निर्णय और डिक्री पुनः बहाल किए जाते हैं। अपील व्यय सहित स्वीकार की जाती है।

पी.बी.आर.

अपील स्वीकार की गई।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।